International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2017; Page No. 148-149

सांख्य दर्शन का सत्कार्यवाद

डॉ0 अशोक कुमार दुबे

एसोशिएट प्रोफेसर, संस्कृत–विभाग, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

ऐसा सिद्धान्त, जो सत कारण से ही सत् कार्य की उत्पत्ति बताये। प्रत्येक कार्य का कोई न कोई कारण होता है परन्तु इस कारण का स्वरूप क्या होगा इस विषय में दार्शनिकों में मतभेद है। कुछ लोग कहते हैं कि असत् कारण से सत् कार्य उत्पन्न होता है अर्थात् *''असतः सत् जायते''*। बीज का विनाश रूप असत् कारण से अंकुर इस सत् कार्य की उत्पत्ति होती है। *अद्वैत वेदान्तियों के अनुसार–'एकस्य सतो विवर्त कार्यजातम्* अर्थात् समस्त, कार्य एक ही (ब्रम्हरूप) सत् के कल्पित या अतात्विक परिमाण है, वास्तविक या तात्विक कुछ नहीं। तीसरा मत नैयायिको का है, इनके अनुसार *सतः 'असज्जायते'* अर्थात् सत् कारण से असत् कार्योत्पत्ति होती है परमाणु आदि में पूर्णतः अविद्यमान द्वैणुक इत्यादि अभिनव कार्य उत्पन्न करते हैं।

मूल शब्दः सांख्य दर्शन, सत्कार्यवाद।

प्रस्तावना

उपरोक्त तीनों मतों से यह सिद्ध नहीं होता कि जगत का कारण प्रधान (प्रकृति) अर्थात् सत्व, रजस् तथा तमोरूप है क्योंकि बौद्धों के अनुसार यदि असत् से सत् उत्पन्न होगा तो सुख दुःख मोहादि को त्रिगुणों से उत्पन्न नहीं माना जा सकता क्योंकि असत् व सत् में अभेद असम्भव है। वेदान्तियों का मत मानने पर भी प्रधान सिद्ध नहीं हो पाता। न्याय में भी सत् और असत् में भेद होने के कारण (सत्वादि) शब्द इत्यादि के कार्य के स्वरूप का नहीं हो सकता अतः सांख्य का मत हैं कि *''सतः सत् जायते'' अर्थात सत् कारण से सत् कार्य उसमें विद्यमान रहता है यथा– तिलेषु तैत्लम्* । कार्य अपने कारण में उत्पत्ति के पूर्व अव्यक्त रूप से विद्यमान रहता हे जो कारण व्यापार हो जाने पर व्यक्त हो जाता है। इस प्रकार कार्य को उत्पत्ति व नाश का अर्थ उस विषय की सत्ता का होना या न होना नहीं है अपितु अव्यक्त से व्यक्त (आविर्भाव) व्यक्त से अव्यक्त (तिरोभाव) होता है जो कि एक प्रकार का परिमाण है। इस प्रकार सांख्य के सिद्धान्त को 'सत्कार्यवाद' कहते हैं।

कार्य – कारण की अभिन्नता के विषय में गीता में कहा गया हैः–

'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।'

''असदकरणादुपादानग्रहणात् सर्वसम्भवा भावात् शक्तस्यशक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम्।।''[2]

अर्थात् कारण व्यापार के पूर्व कार्य, कारण में विद्यमान रहता है क्योंकि–

1. असत् या अविद्यमान होने पर कार्योत्पत्ति हो ही नहीं सकती।
2. (कार्योत्पत्ति के लिए) उसके उपादान कारण का ग्रहण करना आवश्यक है अर्थात् कार्य अपने उपादान कारण से नियत रूप से सम्बद्ध रहता है।
3. सभी कार्य सभी कारण से उत्पन्न नहीं होते।
4. जो कारण जिस कार्य को उत्पन्न करने मे शक्त या समर्थ है उससे उसी कार्य की उत्पत्ति होती है।
5. कार्य कारणात्मक अर्थात् कारण से अभिन्न सा उसी के स्वरूप का प्रतिपादक है।

सांख्य अपने सत्कार्यवाद' सिद्धान्त को दृढ़ करने के पूर्व पूवोक्त बौद्ध आदि मतों को क्रमशः खण्डन करता है–

1. सांख्य बौद्धों के मत का खण्डन करते हुए रहता है कि अंकुर आदि (सत्) की उत्पत्ति का कारण बीज इत्यादि का विनाश या अभाव (असत् कारण) नहीं है अपितु बीज के भावरूप (सत्) अवयव ही है क्योंकि यदि अभाव से भाव की उत्पत्ति मानेंगे तो अभाव के सर्वत्र सुलभ होने से सर्वत्र सभी कार्यों के उत्पन्न होने का दोष आ जायेगा।
2. वेदान्तियों के सिद्धान्त का खण्डन करते हुए कहते है कि जगत् की प्रतीति मिथ्या है यह बात उस प्रतीति में बिना किसी बाधक के उत्पन्न हुए बिना कैसे कही जा सकती है।
3. न्याय –वैशेषिकों के मत का खण्डन करते हुए सांख्य कहता है कि कार्य सतह है इसके समर्थन में प्रथम हेतु देते हैं–

असदकरणात्

यदि कारण व्यापार से पूर्व कार्य असत् होता तो उसे कोई भी सत् नहीं बना सकता । यथा– नीले रंग को हजारों कुशल कारीगरों से भी पीला नहीं बनाया जा सकता। एक शंका उठती है कि एक ही घट कच्चा रहने पर नीला और पकने पर लाल हो जाता है उसी प्रकार एक ही घट कारण व्यापार के पूर्व असत् एंव उसके बाद सत् हो सकता है।

समाधान में कहते है कि धर्मीघट के अविद्यमान रहने पर असत्व धर्म उसमें आधेय रूप से कैसे रहेगा जब उसका आधार घट ही नहीं होगा। अतः घट कारण–व्यापार से पूर्व भी सत् है। दूसरी बात यह है कि असत् अभाव का और घट भाव का द्योतक है भाव और अभाव में तादाम्य असम्भव है। अतः असत्घट यह वाक्य ही निरर्थक है इसलिए कारण व्यापार वने पूर्व भी कार्य सत् रहता है। यथा– 'तिलेषु तैलम् में तिल के पेरे जाने रूपी कारण व्यापार से ही अनभिव्यक्त रूप से विद्यमान तेल निकलता है वस्तुतः असत् वस्तु कभी उत्पन्न होती हुई नहीं दिखलाई पड़ती।

उपादानग्रहणात्

उपादान कारण ग्रहण कार्य के साथ सम्बन्ध। कार्य के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध कारण ही कार्य को उत्पन्न करता है। यदि कार्य पूर्वतः असत् है तो उसका कारण के साथ सम्बन्ध असम्भव है। जैसे, मिट्टी से घट का सम्बन्ध होने से घट, मिट्टी से उत्पन्न होता है, पट आदि से नहीं।

सर्वसम्भवाभावात्

कारण से असम्बद्ध कार्य को क्यों नहीं मानते? इसके उत्तर में कहते है कि सभी कार्यों का सभी कारणों से उत्पत्ति न होने के कारण यदि 'सर्वसम्भवाभावात् पद का प्रयोग न किया गया होता तो समस्त कारणों से सभी कार्य अनियत्रित रूप से उत्पन्न होने लगेंगे। यथा, मिट्टी से कपड़ा, जल से घट आदि।

'शक्तस्तशक्यकरणात्'

जो कारण जिस कार्य की उत्पत्ति में समर्थ है, उस कारण से उसी कार्य के उत्पन्न होने से, कारण और कार्य परस्पर असम्बद्ध नहीं हो सकते और असम्बद्ध न होने पर कार्य का सत् होना अनिवार्य है। जैसे– मिट्टी से घड़ा एवं तन्तु से पट बनते हुए देखकर हम कहते हैं कि मिट्टी और तन्तु ही वह समर्थ कारण है जो घट व पट, इस समर्थ कार्य को उत्पन्न करता है। यदि 'शक्तस्तशक्यकरणात्' पद का प्रयोग न किया गया होता मिट्टी (असमर्थ) से वस्त्रादि की उत्पत्ति होने लगती जो कि असम्भव है।

'कारणभावाच्च'

कार्य इसलिये भी उत्पत्ति से पूर्व सत् सिद्ध होता है क्योंकि वह कारण रूप होता है। कारण यदि सत् है तो तदभिन्न कार्य असत् कैसे?

कार्य का कारण अभेद अर्थात् अपृथकत्व सिद्ध करने के लिए ये प्रमाण हैं–

1. पट तन्तुओं से भिन्न नहीं है क्योंकि पट, तन्तुओं का धर्म है एवं उसी की विशेष अवस्था है। इसी प्रकार कार्य भी कारण से भिन्न नहीं है।
2. तन्तु और पट में इसलिए भी अभेद है क्योंकि बिना तन्तुओं के ग्रहण किये पट की प्राप्ति ही नहीं हो सकती है। इसी प्रकार बिना कारण का ग्रहण किये कार्य की प्राप्ति नहीं हो सकती।
3. तन्तु और पट में अभेद इसलिए भी है क्योंकि यहां पात्र और बेर की भांति संयोग, हिमालय और विन्ध्य की भांति विभाग का अभाव है। इसी प्रकार कार्य और कारण में भी संयोग और विभाग होने से अपृथकत्व है।यथा– *'कुण्डबदरयोः'*।
4. तन्तु (कारण) और पर (कार्य) का अभेद इसलिए है क्योंकि उपादानभूत 'तन्तुओं' के भार से भिन्न भार का कार्य पट में अप्राप्त है। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि कार्य कारणात्मक ही है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि कारण–व्यापार से पूर्व कार्य, कारण में अव्यक्त रूप से विद्यमान रहता है अर्थात् सत् कारण ही सत् कार्य रूप में व्यक्त होता है–यही 'सत्कार्यवाद' का सिद्धान्त है।